पर्वतीय प्राकृतिक सम्पदा

ICIMOD

Discussion Paper
Series No. MNR 96/H3

भारत और नेपाल में सामुदायिक वन प्रदेश परस्पर आदान-प्रदान

मेरी हाबले
जेफ्रे वाई कैम्पबेल
अनुपम भाटिया

© सर्वाधिकार

अन्तर्राष्ट्रिय एकीकृत पर्वतीय विकास केन्द्र

ISSN 1024 - 7556

प्रकाशक

अन्तर्राष्ट्रिय एकीकृत पर्वतीय विकास केन्द्र
पोष्ट बक्स नं. ३२२६
काठमाण्डौ, नेपाल

इसिमोडको प्रकाशन इकाईमा टाईप डिजाइन गरेको

The views and interpretations in this paper are those of the author(s). They are not attributable to the International Centre for Integrated Mountain Development (ICIMOD) and do not imply the expression of any opinion concerning the legal status of any country, territory, city or area of its authorities, or concerning the delimitation of its frontiers or boundaries.

ISSN 1024 - 7556

भारत और नेपाल में सामुदायिक वन प्रदेश परस्पर आदान-प्रदान

मेरी हाबले
जेफ्रे वाई कैम्पबेल
अनुपम भाटिया

MNR Series No. 96/H3

मेरी हाबले स्वतन्त्र परामर्शसेवा, इङ्गलाण्ड, जेफ्रे वाई कैम्पबेल कार्यक्रम अधिकृत, सामुदायिक वन र पर्यावरण, फोर्ड फाउण्डेशन, नयाँ दिल्ली, अनुपम भाटिया, इसिमोडको क्षेत्रीय समन्वयकर्ता, सहभागितामूलक प्राकृतिक साधन व्यवस्थापन आयोजना, ईसिमोड, काठमाण्डौ, नेपाल

श्रावण २०५३
अन्तर्राष्ट्रिय एकीकृत पर्वतीय विकास केन्द्र
काठमाण्डौ, नेपाल

Preface

Forest areas in the uplands play a critical role in maintaining quality watersheds in the Hindu Kush-Himalayas. While the policies for maintaining common property resources may vary across countries, experience indicates that these boundaries collapse when common issues are addressed. This becomes obvious when we study the emergence of participatory forest management in the countries of Nepal and India.

While Nepal is, today, acknowledged as a pioneer in promoting community forestry, India too has made a beginning in this direction by approving an enabling government order to encourage joint forest management in forest areas.

Both the countries are today well on the way to transforming forest management from custodian mechanisms to people oriented approaches; are addressing technical forestry issues which give priority to the needs of forest communities; are evolving collaborative forest management plans in consultation with communities, and are beginning to focus on emerging issues of equity in sharing of usufruct and benefits.

This paper makes a case that there are tremendous learning opportunities between Nepal and India and that stronger interlinkages based on mutuality can contribute to our common goal of ushering in sustainable forest management in the Hindu Kush-Himalayas.

The authors have drawn upon their considerable experience in community forestry and joint forest management in writing this discussion paper.

बिषय सूचि

परिचय	१
ऐतिहासिक पूर्वाधार	३
नेपाल में सामुदायिक वन निर्माण के कार्यक्रमों का आरम्भ	३
वन निर्माण संस्था का विकास	४
सामुदायिक वन निर्माण का विकास	७
सन् १९९३ का वन कानून	१०
सन् १९९३ के वन कानून के लिए नियम एवं विधि	११
भारत में संयुक्त वन व्यवस्था का प्रादूर्भाव	१२
सन् १९८८ की वन नीति एवं जुन १, १९९० की विज्ञप्ति	१३
इस विज्ञप्ति के अनूसार	१४
उपयुक्त समूदाय-स्तर के संस्थाओं के लिए खोज	१४
स्वदेशीय सामुदायिक वन निर्माण कार्यक्रम बनाम बाह्य रुप से विकसित संस्थाएं	१४
समूदाय कौन है? स्तर और समूह के आधार पर सामुदायिक वन निर्माण कार्यक्रम का निर्णय	१५
उपभोक्ता कौन है?	१६
नियंत्रण में साझेदारी एवं परिवर्तन	१८
सामुदायिक वन निर्माण कार्यक्रम एवं संयुक्त वन व्यवस्था का नियोग	१९
सामुहिक व्यवस्थापन योजना	१९
तकनीकि व्यवस्था	२०
मूल्य बृद्धि और आमदानी का उत्पादन	२१
सामुहिक वन निर्माण कार्यक्रम के लिए प्रशिक्षण	२१
गांव-स्तर के उद्योगों के अन्तर्गत नया विकाश	२२
वन नौकरशाही: वर्तमान समस्याएं एवं भविष्य की दिशाएं	२२
सामुदायिक वानिकी एवं संयुक्त वन प्रवंध की प्रगति	२४
निष्कर्ष	२५
सन्दर्भ सामाग्री	२८

परिचय

भारतीय उपमहादेश वन स्रोतों के सामुहिक व्यवस्था में नाटकीय परिक्षणों की श्रृंखलाका साक्षी रहा है । सन् १९७० से लेकर भारत और नेपाल, दोनों देशोंमें सामाजिक और वन निर्माण के कार्यक्रमो ने, शक्तिशाली सरकारी व्यवस्था और उन लोगों के बीच संबन्धको बदलने की चेष्टा की है, जो साक्षात रुप से वन स्रोतों पर निर्भर करते हैं । ये कार्यक्रम यह दर्शाते हैं कि, स्थानीय लोगोंका एक बहुत बडा हिस्सा मूख्य रुप से अपनी जीविका, शक्ति, पोषण आमदनी एवं खेती के तरीकों को व्यवस्थित करने के लिए वन स्रोतों पर निर्भर करते हैं । इन कार्यक्रमों ने यह महसूस किया है कि भारतीय उपमहादेश में वन नाश को रोकने के लिए सरकारद्वारा प्रारम्भ किये गए पारंपरिक व्यवस्था असफल साबित हुए हैं, क्योंकि इन कार्यक्रमों (पारंपरिक कार्यक्रम) में स्थानीय जातियों (समुदायों) की सक्रीय सहभागिता नहीं हे ।

पारंपरिक वन सुरक्षा एवं व्यवस्था के तरीकों की अपूर्णता विकल्पों के खोज की ओर अग्रसर करती हैं, फलस्वरुप विभिन्न प्रकार के विकल्प सामने आते हैं । ये विकल्प साधारण रुप से सामाजिक वन निर्माण, कृषि वन निर्माण, सामुदायिक वन निर्माण एवं संयुक्त वन निर्माण, जैसे वर्गो में बांटे जा सकते है ।

सन् १९८० के मध्य में इन सामाजिक एवं सामुदायिक वन निर्माण के कार्यक्रम पर विचार एवं समीक्षा होना आरम्भ हुआ । भारत के कुछ हिस्सों में कृषि वन निर्माण कार्यक्रम अपने प्रारम्भिक अवस्था में अत्यन्त सफल हुआ। किन्तु नीजि वृक्ष विकाश वृहत् पैमाने पर खासकर उत्तर पश्चिमी भारत तक ही सीमित रहा । गुजरात और कर्नाटक को बांस बहुल बाजारों में स्थानीय बहुलता प्राप्त हुई । शायद गिरती हुई कीमत एवं स्थानीय योगदानों में कमी के कारण कृषि वन निर्माण के कार्यक्रमों की प्रारंभिक तेजी शनैः शनैः कम होती गई (सक्सेना १९९३) सामाजिक वन निर्माण के उपर समीक्षा, सामान्य पुंजी स्रोतो पर केन्द्रित हुई जो बहुत सकारात्मक थी । असफलता के सामान्य कारणों में एक मूख्य कारण था, वन निर्माण के कार्यक्रमों की योजनाओं एवं व्यवस्थापन में लोगों की सहभागिता में कमी । फलस्वरुप वन के अस्तित्व में अत्यन्त कमी आयी और सामुदायिक संस्थाओं को वृक्षारोपण की जिम्मेवारीको अत्यधिक रुप में वहन कराना पडा । आगे चल कर इन दोनों कार्यक्रमों ने (कृषि वन निर्माण, एवं सामाजिक वन निर्माण) वन क्षेत्रों पर चाप को कम करने के लिए सामान्य उद्देश्यों को आपस में बांटा । ये चाप वैकल्पिक इन्धन के स्रोतों, चारा और वन उत्पादन के द्वारा कम हुए, फिर भी वन क्षेत्रों में ह्रास जारी रहा । भारत

में नीजी और सरकारी जमीनों पर पुंजी और शक्तिके गहन प्रभाव ने, ध्यान को, प्राकृतिक स्रोतों के व्यवस्थापन और लागत से हटाया ।

यही वह आधार है, जिसने स्थानीय लोगोंको राजकीय वन क्षेत्रों की रक्षा एवं व्यवस्था के लिए सक्रीय रुप से शामिल करते हुए, सामुदायिक वन निर्माण के नये तरीकोंको आरम्भ करने के लिए प्रेरित किया । नेपाल में जबकि उपभोक्ता समूह के द्वारा वन निर्माण कार्यक्रम व्यवस्थित हो रहा है, इसी समय भारत में स्थानीय समूदाय और राजकीय वन विभागों के बीच संयुक्त वन व्यवस्थापन की व्यवस्था तेजी से शूरु हो रही है । इसी क्रम में बहुत से स्वयं प्रारंभिक एवं स्वदेशीय वन व्यवस्थापन की प्रणालियां आरम्भ की जा रही हैं, और ये व्यवस्थाएं अपनी पहचान भी बना रही हैं (कैम्पवेल और डेनहोम, १९९२, क्षेत्री, १९९२, कार्की, १९९२ एवं अन्य) । सामाजिक वन निर्माण कार्यक्रम और कृषि वन निर्माण कार्यक्रम ऐसी योजनाएं है जो सर्वप्रथम वन सम्बन्धित व्यक्तियों को वन से बाहर लाकर लोगों के गांवो और खेतों की और उन्मुख कर रहे है, क्योंकि यही वे व्यक्ति है जो वन के प्रधान उपभोक्ता हैं । इन उपभोक्ताओं की उपयोगिता (प्राकृतिक वनों के व्यवस्थापन में) को देखते हुए, नये सामुदायिक वन निर्माण के कार्यक्रमों को एक कदम आगे जाने की आवश्यकता है, जिससे लोग फिर से वनों की और लौट सकें ।

भारत और नेपाल में करीब-करीब पन्द्रह बर्षों में सामुदायिक और सामाजिक वन निर्माण कार्यक्रमों का सामानान्तर अनूभव बहुत सारी समानताओं और कुछ आश्चर्यजनक विभिन्नताओं, साथ ही बहुत सी असफलताओं और कुछ सफलताओं को प्रस्तुत करता है । समान वातावरणीय अवस्था के बावजूद, एक जैसी सामाजिक आर्थिक विशेषताएं और कुछ एक जैसे कार्यक्रमों के, नेपाल और भारत के बीच बहुत ही कम मात्रा में अन्तरक्रियाकलाप और सदभाव दिखाई पडता है । आंकडों से यह पता चलता है कि पन्द्रह बर्षो के भीतर करीव २० खरव डालर इन कार्यक्रमों पर खर्च हुए हैं । पूनः राष्ट्रीय और राजकीय वन विभाग अनुदानों को सामुदायिक और संयुक्त वन निर्माण की व्यवस्था की ओर ले जा रहे हैं । अभी भी ये नये वन निर्माण के परीक्षण धीर-धीरे विस्तृत हो रहे है । इनका (परिक्षणोंका) मूख्य ध्यान स्थानीय-स्तर के संस्था और समानताओं पर होने के कारण, ये लक्ष्य आधारित न हो कर ये सहभागिता, वन अधिकारियों का प्रशिक्षण, स्थानीय स्तर की संस्थाओं का बनना, सामुहिक सुक्ष्म योजनाएं, लाभांशोंका समान वर्गीकरण, समलिङ्गता आदि नये विकास के नियोजक

हैं । नेपाल में "सामुदायिक वन निर्माण कार्यक्रम" और भारत मे "संयुक्त वन व्यवस्थापन," इन चुनौतिओंको विभिन्न प्रकार से स्वीकार कर रहे है ।

इन परीक्षणों और अनुभवों से ज्ञान हासिल करना अत्यन्त आवश्यक है । नेपाल और भारत के वर्तमान परिवर्तन का सार यह है कि वन क्षेत्रों के व्यवस्थापन के अधिकार को केन्द्रीय वन विभाग से विकेन्द्रित सामान्य जनता की संस्थाओं की तरफ मुडना चाहिए । भारत और नेपाल के उपर्युक्त दोनो कार्यक्रमों (सामुदायिक एवं संयुक्त वन निर्माण कार्यक्रम) के ऐतिहासिक पूर्वाधार और कानूनी आधार कुछ सामानताओं के बावजुद काफी अलग-अलग हैं । यद्यपि सामुदायिक संस्थाओं के प्रकार कुछ खास विशेषताओं (स्वभावों) में समानताएं भी रखते हैं फिर भी ये भारत के भीतर ही विभिन्न राज्यों में विभिन्न प्रंकार के हैं । फलस्वरुप नियन्त्रण की जिम्मेवारी जो राजकीय और राष्ट्रीय व्यवस्था से स्थानीय और सामुदायिक, पर आती हैं, वह भी भिन्न-भिन्न प्रकार की है । विडम्बना यह है कि इन दोनो देशों में कार्यक्रमों ने अधिक सहयोगित वन व्यवस्थापन, तकनीकि, सामाजिक एवं आर्थिक बिन्दुओं की ओर ध्यान न दे कर, भारत में सामुदायिक सुरक्षाको आरम्भ करने पर, और नेपाल में साधारण कार्यान्वयन के योग्य योजना पर अधिक ध्यान दिया है। फलस्वरुप, बहुत सी समस्याएं एक जैसी हैं ।

ऐतिहासिक पूर्वाधार

परिक्षणों एवं अनुभवोंके (नेपाल और भारत के बीच) आदान-प्रदान को समझने के लिए, सर्वप्रथम आवश्यक है उन सन्दर्भों को जानना, जिनमें सामुदायिक वन निर्माण के कार्यक्रमों को लागू किया गया, और सामाजिक तथा राजनीतिक आधार जो इस प्रकार के वन निर्माण कार्यक्रमों के अवस्था को आरंभ करने का कारण बना । भारत के क्षेत्रीय वन निर्माण कार्यक्रमों के विषय में काफी लेख आदि प्रकाशित हो चुके हैं, किन्तु पाठक शायद नेपाल के सामुदायिक वन निर्माण के ऐतिहासिक पूर्वाधार से परिचित नही होंगे ।

नेपाल में सामुदायिक वन निर्माण के कार्यक्रमों का आरम्भ

नेपाल उन देशों में से एक हैं, जिन्होने लोगों पर आधारित वन निर्माण के कार्यक्रमों का आरंभ किया । नेपाल के राजनीतिक ढांचे में वन नाश और वन निर्माण एक साथ ही उभर कर सामने आया है । एक सौ सालों से उपर तक

(सन् १८५०-१९५०) नेपाल के जंगलों को काट कर खेती और राजस्व के लिए उपयुक्त समझा जाता रहा है । नीति एवं अभ्यास ने तराई के बहुमूल्य जंगलो के अनियंत्रित उपयोग के लिए स्वीकारोक्ति दी जबकि दूर और कठिन होने के कारण पहाडी जंगल भी कृषि विकासद्वारा प्रभावित हुए। किन्तु कुछ दशकों से वनका आकार तो नहीं घटा है, उनका घनत्व घट गया है ।

अब नेपाल के अन्तर्गत करीव ५.५ मिलियन हेक्टर प्राकृतिक जंगल है जो भुमि प्रदेशों का केवल करीब ३७ प्रतिशत है । तराई एवं उच्च हिमाली क्षेत्रों में केवल ११ प्रतिशत है, बचे हुआ क्षेत्र (वनक्षेत्र) मध्य पहाड एवं शिवालिक के बीच बराबर रुप से बंटे हुए हैं । इन क्षेत्रों में करीव ६१ प्रतिशत क्षेत्र सामुदायिक वन निर्माण की क्षमता से युक्त हैं और व्यवस्थापन के लिए स्थानीय लोगों को दिए जा रहे है । मध्य पहाडों मे बहुत सारे जंगली क्षेत्र छोटे-छोटे पैबंदो के रुप में हैं । कुछ ही जंगल क्षेत्र ऐसे हैं जो पारंपरिक खेती के लिए उपयुक्त हैं ।

वन निर्माण संस्था का विकास

वन उत्पादन के लिए सरकार की प्राथमिकता को प्रतिबिम्बित करते हुए, वन प्रशासन ने एक श्रृंखलाबद्ध मौलिक परिवर्तन का विश्लेषण किया है । जंग बहादुर राणा के देख-रेख में तैयार किये गए कानूनी नियम के द्वारा वन उपयोग को आकार प्रदान किया गया । वन के अधिक उपयोग को नियंन्त्रित करने के लिए कुछ और अधिक नियम बनाए गए (महत और अन्य १९८६)। इन नियमों के प्रकाशन के कारण नेपाल के वनों से उत्पादन बडा और विक्री के लिए, गैर कानूनी ढंग से भारत में निर्यात हुआ ।

नेपाल में वन को उपयोग में लाने के लिए ब्रिटिश प्रभाव महत्वपूर्ण रहा । इस कार्यक्रम के तहत बिलायती वन सलाहकार (जे.वि. केलियर १९२५स्३०) की नियुक्ति हुई जिन्होने तराई के वनों को नियन्त्रीत किया और साथ ही साल, रावुस्टा, शोरीया, का निर्यात भारत की तरफ हुआ । दो आफिसरों को नियूक्ति हुई एक की तराई क्षेत्र में काठ निर्यात में नियंत्रण करने के लिए, दुसरे की काठमाण्डु के पहाडी जंगलों के लिए । भारतीय ठेकेदारों को जो वृक्षारोपण आदि के ज्ञान से संबन्धित थे, उन्हें इन जंगलों में काम करने के लिए लाया गया । प्रथम विश्वयूद्ध के दौरान नेपाल के योगदान के रुप में रेल निर्माण के लिए राज्यकर रहित काठों का निर्यात भारत में हुआ (कोलियर, १९७६:२५४)

भारतीय ठेकेदारों के बीच में ही वन उपयोग के तरीके सीमित रहे । ऐसा प्रतीत होता है कि नेपालियों का वन उपयोग के उपर बहुत ही कम नियंत्रण था, जिससे लाभांशो की अधिक मात्रा भारत स्थित ब्रिटिश को प्राप्त हुआ ।

सन् १९४२ तक ऐसा ही रहा, उसके बाद नेपाल के भीतर दुसरे ब्रिटिश सलाहकार के साथ एक "वन सेवा" की स्थापना हुई । ये सलाहकार थे इ.ए. स्मीथिस, जिन्होंने भारतीय वन विभाग में बहुत साल व्यतीत किये थे, और उन्हीं से नये विभाग की रुप-रेखा के लिए सलाह ली गई । भारतीय वन सेवा के रुप-रेखा के आधार पर इसका निर्माण हुआ । भारतीय वन सेवा के नियमों के अनूसार ही इसके कर्मचारियों को प्रशिक्षण के लिए देहरादुनके "इम्पेरियल फारेष्ट्री स्कुल" में भेजा गया । विभाग की स्थापना ३ क्षेत्रीय और १२ विभागीय वन अधिकारीयों के साथ हुई । ब्रिटिश भारत में स्थापित रुप-रेखा का अनूशरण करते हुए कार्यो के योजनाओं के तहत वनका उपयोग किया गया (एन. ए. एफ. पी १९८२(८९) । सन् १९५७ में वनोंका केन्द्रीयकरण आरंभ हुआ किन्तु अंशत: ही सफल हुआ । केन्द्रीयकरण और सरकारी नियंत्रण के डर से यह छुपाने के लिए कि यह क्षेत्र जंगली क्षेत्र के अन्तर्गत पडता है, काठोंका वृहत् पैमाने पर ह्रास होने लगा ।

सन् १९५९ में संपूर्ण देश के लिए प्रथम "वन मन्त्रालय" की स्थापना हुई । किन्तु इस अवस्था में भी प्रशिक्षित कर्मचारियो की कमी थी, जिससे सभी स्थानों के जंगल की व्यवस्था असंभव थी । पहाडी जंगलोंको किसी योजना के अन्तर्गत नहीं लाया गया । समष्टि रुप से देखा जाए तो वन औपचारिक रुप में अव्यवस्थित ही रहा तथा वन प्रशासन अविकसित एवं अल्प कर्मचारियों युक्त ।

सन् १९६० में प्रजातान्त्रिक आंदोलन के असफल होने के बाद एक नयी पार्टी विहिन पंचायतका आगमन हुआ । १९६१ में वन कानून बना जिसके तहत वनों के विभिन्न प्रकारको विभिन्न भागों में बांटा गया, ये थे :

- *पंचायत वन:* कोई सरकारी वन अथवा इसका कोई भाग जो कि बांझ था या कटे हुए वृक्षों से युक्त था, वह श्री ५ के सरकारद्वारा गांव पंचायतों को सौंपा जा सकता था । यह कार्य वृक्षारोपण के द्वारा गांव समुदायों के भलाई के लिए किया गया था, किन्तु उल्लिखित शर्तो और नियमों के तहत ही ।

- *पंचायत रक्षित वन :* कोई सरकारी वन अथवा इसका कोई भाग सुरक्षा और व्यवस्थापन के लिए पंचायत को सौंपा जा सकता था ।

- *धार्मिक वन :* सरकारी वन जो कि धार्मिक स्थलों पर थे धार्मिक संस्थाको सुरक्षा और व्यवस्था के लिए सौंपे जा सकते थे ।

- *ठेक्का वन :* वन उत्पादन और उपयोग के लिए कोई भी सरकारी वन क्षेत्र जिसमें कोई भी वृक्ष नहीं था, किसी भी व्यक्ति अथवा संस्था को श्री ५ के सरकारद्वारा सौंपा जा सकता था ।

वन क्षेत्रों पर सरकार का ही पूर्ण स्वामित्व रहा, जब कभी सरकार यह जरुरी समझती तो नियन्त्रण पूनः अपने पास रख सकती थी । पंचायत को कुछ ऐसे अधिकार प्राप्त थे जिसके तहत कानून का अतिक्रमण करने वाले लोगों को सजा दि जा सकती थी । लेकिन व्यवस्थापन निर्णय सरकारी वन सेवा के पास ही रहा । उन नीजी वनोंको सरकार अपने नियंत्रण में ले सकती थी जिनके विषय में यह धारणा थी कि इनका व्यवस्थापन अच्छी तरह नहीं हुआ है । यह नियंत्रण ३० सालों तक रह सकता था । ऐसे वनों की आमदानी को, व्यवस्थापन की कीमत काट कर मालिकों को दिये जाने की व्यवस्था थी । वन कानून (सन् १९६१ का) ने पंचायतों को बैध किया किन्तु स्थानीय वन के उपर वन उपभोक्ताओं के नियंत्रण को नहीं । इस नियम ने उन इलाकों को (काठमाण्डु से दुर) थोडा सा ही प्रभावित किया जहां स्वार्थ के लिए स्थानीय लोग लगातार जंगलोका उपभोग करते रहे थे । किन्तु इस नियम ने भविष्य के परिवर्तन एवं सामुदायिक वन निर्माण के लिए उपयुक्त वातावरण तैयार करने में मदद किया । नवें वन सम्मेलन (सन् १९७४) के फलस्वरुप सामुदायिक वन निर्माण की और नये कदम का परिचालन हुआ । इस सभा में नेपाल के सभी भागों से अधिकारियों को आमंत्रित किया गया। समूदाय सम्बन्धित कर्मचारियों को समूह जो कि विभिन्न जिलों में कार्यरत थे, उन्होनें वन निर्माण के एक नये तरीके को जन्म दिया जिसमें कि वन, व्यवस्थापन के लिए स्थानीय लोगों की सहभागिता थी । इसे "सामुदायिक वन निर्माण" के नाम से जाना गया । सन् १९७६ के इस सम्मेलनके कार्यक्रमों ने राष्ट्रीय वन योजना के आधार को तैयार किया, जिसमें कि वन के विभिन्न विभाजनों को पंचायतों को प्रदान करने में, सन् १९६१ के "वन कानून" के बिन्दूओं को फिर से लागू किया गया, किन्तु अधिक विस्तृत अधिकार जिला वन अधिकारियों को दिए गए । यह अधिकार उस योजना के तहत दिया गया था जिसमें कि केन्द्रीकृत वनके नियंत्रण का

हस्तान्तरण पंचायतके नियन्त्रण में हुआ था । सन् १९७८ में पंचायत के नियमों का प्रकाशन हुआ जिसमें फिर से वन कार्यक्रमों के कार्यान्वयन के लिए ढांचा प्रस्तुत किया गया ।

किन्तु सन् १९७६ के अंत तक उपर्युक्त प्रशासनिक पूनर्गठन का अनूशरण करते हुए, सुदूर क्षेत्रों के जंगल अभी भी वन विभाग के नियन्त्रण में नहीं थे । इनकी जिम्मेवारी जिला अधिकारियों को ही थी । सन् १९७६ के बाद वन विभाग इस तरह से व्यवस्थित किया गया कि प्रत्येक जिला एक वन अधिकारी के सीमा क्षेत्र में आ गया । अभी तक कर्मचारियों की संख्या कम ही थी और वन की सुरक्षा तक ही सीमित थी । इस पुरे समय में वन विभाग एक सुरक्षा प्रदान करने वाले के रुप में ही अवस्थित रहा, कोई खास स्रोतों की सक्रीय व्यवस्था नहीं हो पायी । देहरादुन के वन व्यवस्था की रुप रेखा के आधार पर अवस्थित होने के कारण (जो कि नेपाल के परिप्रेक्ष्य में उपयुक्त नहीं था) यह अपूर्ण ही रही । इस पुरे समय में स्थानीय जनता अपनी आधारभुत जरुरतों को पूरा करने के लिए गैर-कानूनी रुप से सरकारी वनों का उपभोग कर रहे थे ।

इस तरह वर्तमान समय में वन निर्माण की स्थिर व्यवस्था स्थानीय लोगों की वन विभाग के साथ साझेदारी में निर्भर करती है । वन विभाग न तो कभी वन नाश रोकने में सफल रहा और न ही बचे हुए वनों के सफल व्यवस्थापन में ही (जोशी १९९३:३) ।

सामुदायिक वन निर्माण का विकास

सत्तर और अस्सी के दशकों में सामुदायिक वन निर्माण के विकास के लिए बृहत् अनूदान प्राप्त हुए हैं । जिससे देशके विभिन्न भागों मे अनूसन्धानात्मक संस्थाओं की स्थापना हुई । सामुदायिक वन निर्माण कार्यक्रम को वन ह्रास के समाधान के रुप में समझा गया । साथ ही यह समझा गया कि स्थानीय जनता अपनी इन्धन की जरुरतों को पूरा करने के लिए और अधिक वृक्षारोपण करेंगे । अंततः वन कर्मचारी वन की सुरक्षा करने लगे केवल वृक्षों की नहीं, स्थानीय जनता इस सारे समय में, जबकि राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय संस्थाओं का योगदान पूनर्वन विकास के लिए हुआ था, वन को उपभोग में लाने लगी और वन की सुरक्षा भी करने लगी । इस तरह अस्सी के मध्य में बहुत सारे अनूसंधानात्मक संस्थाओं ने सामुदायिक वन निर्माणका पूनः मूल्यांकन किया । इस तरह ये संस्थाएं वन विभाग के कर्मचारियों के साथ मिल कर तत्कालीन सरकार की स्थानीय व्यवस्थापन का अनुमोदन करने लगी । पंचायत या गांव आधारित

क्षेत्र (वन क्षेत्र) से वन विभाग सम्बन्धित क्षेत्र की ओर यह एक मौलिक परिवर्तन था । इसने फिर से प्राकृतिक वन क्षेत्र के व्यवस्थापन के अभ्यासों पर ध्यानाकर्षण किया । इन स्रोतों को व्यवस्थित करने के लिए ग्रामीण लोगों एवं वन विभाग के कर्मचारियों की सापेक्षित योग्यता के विषय में जिज्ञासा हुई ।

सर्वप्रथम नेपाल सरकार की वन क्षेत्रीय नीति पञ्चवर्षिय योजना (१९८१-१९८५) के अन्तर्गत प्रकाशित हुई । इस नीति ने वन स्रोतों के व्यवस्थापन में, सुरक्षा एवं इनकी उपयोगिता पर जोर दिया । इस नीति ने फिर विकेन्द्रीकरण के नियम (१९८२) और इसके उपयोग (१९८४) को भी पोषित किया । नियम और कानून, पंचायत और जिला-स्तर की योजनाओं के निर्माण की जिम्मेवारी को बहन करने के लिए थे । इस कानून ने ग्राम पंचायत एवं वार्ड समिति की जिम्मेवारीयों की रुप-रेखा को तैयार किया और निम्न लिखित को बनाने के लिए शक्ति भी प्रदान की ।

लोगों की उपभोक्ता समिति को बनाना (किसी खास जंगल के क्षेत्रों की सुरक्षा के निमित्त वन उपभोग के लिए) इस समिति के द्वारा निम्नलिखित कामों को करने के लिए जैसे, वन निर्माण, वनका उपभोग, एवं स्थिर रुप से वनका व्यवस्थापन (रेग्मी १९८२:४०३) ।

विकेन्द्रीकरण का कानून मौलिक पंचायत वन नियम के बाहर ही रहा, जिसने ग्राम पंचायतको स्थानीय संस्था के रुप में वन व्यवस्थापन के लिए व्यवस्थित किया था । पंचायत वन और पंचायत रक्षित वन, ने नियमों (सन् १९७५) के संशोधन (१९८८) ने बाद में विकेन्द्रीकरण कानून का संन्दर्भ बनाकर उपभोक्ता समूह के बिचार (विश्वास) को प्राप्त किया ।

वर्तमान अष्ट वर्षीय योजना की रुप-रेखा में योजनाओं के विकेन्द्रीकरण एवं विकास के कार्यक्रमों के नियोग (कार्यान्वयन) को गांव और जिल्ला क्षेत्र तक प्रसारित करने पर पूरा जोर दिया है (१९९१:९) । उपर्युक्त रुप-रेखा (योजनाओं) को अन्तरचिन्हित करते हुए, अपनी स्वयं की सेवाओं को व्यवस्थित करते हुए, सरकार अथवा दुसरी संस्थाओं के साथ मिलकर, ग्रामीण विकासको बढाना उपभोक्ता समूह की प्रतिज्ञा है । विकेन्द्रीकरण के कानून के अनुमोदन के साथ यह (ग्रामीण विकास) और भी विकसित हुई । इसने (विकेन्द्रीकरणने) स्थानीय स्तर के विकास के व्यवस्था के रुप में उपभोक्ता समूह के सहभागिता को और भी शक्तिपूर्ण किया ।

"सामुदायिक वन" निर्माण के लिए सन् १९८७ एक महत्वपूर्ण साल था । इस साल के अन्त में, नियम निर्माण कर्ताओं, वन विभाग के क्षेत्रीय कर्मचारियों एक संस्थाओं (परियोजना) के कर्मचारियों ने साथ मिलकर काठमाण्डु में सर्वप्रथम एक कार्यशाला गोष्ठीकी आयोजना की । इस कार्यशाला के निष्कर्ष और उपभोक्ता समूह के बिचार ये दोनो ही वन संबन्धी प्रधान योजनाओं को बनाने के लिए उपयुक्त हुए ।

"सन् १९८८ वन क्षेत्रों के लिए प्रधान योजना" जो कि अन्तर्राष्ट्रीय कोशिशों से प्रेरित थी, पूरी मूख्य के सभी वन व्यवस्था को एक रुप ढांचे मे लाने के लिए, पूर्ण हुई । इस योजना के निर्माण में बहुत सारे स्वदेशीय एवं विदेशी नैपुण्य को शामिल किया गया था । यह २१ वीं शताव्दी में वन निर्माण कार्यक्रम के लिए एक नियम और योजना की रुप-रेखा प्रदान करती है । इस २१ वीं शताव्दी में सामुदायिक वन और नीजी वृक्षारोपण के द्वारा स्थानीय लोगों की, आधारभुत वन उत्पादन से संवन्धीत जरुरतों को प्राथमिकता दी गई है । इस रुप-रेखा को प्राप्त करने के लिए निम्नलिखित योजनाएं वर्णित हैं:

- क्रमिक रुप से सभी पहुंच योग्य पहाडी वनों को समुदायों को सुपूर्द उस हद तक करना जहां तक कि ये इसे व्यवस्थित एवं नियंत्रित करने के लिए इच्छुक हों ।

- बिचारों में विस्तार की आवश्यकता, ये विचार जंगल काट्ने वालों एवं दूसरों के विश्वास को हासिल करने पर लक्षित हो । खास कर महिलाओं के विश्वास को जो कि प्रतिदिन के निर्णय पर विश्वास करती हैं ।

- सलाहकार एवं विस्तारवादी के नये रुप में, इस मन्त्रालय के सभी कर्मचारियों का पूनः प्रशिक्षण (एच. एम. जी. एन १९९१ अः १४) ।

- वन विभाग में "सामुदायिक वन निर्माण कार्यक्रम" को प्राथमिकता दी गई है । इसके मूख्य दो अङ्ग हैं :

- प्राकृतिक वन की व्यवस्था एवं ह्रास वनों में संवन्धीत वृक्षारोपण, दोनो ही सामुदायिक वन निमार्ण कार्यक्रम के अन्तर्गत हैं, (पहले जो पंचायत रक्षित जंगल के रुप में जाने जाते थे), और

- खुले और क्षतिपूर्ण इलाकों में सामुदायिक वृक्षारोपण की स्थापना एवं व्यवस्था, पहले जो पंचायत वन के नाम से जाने जाते थे, (एच.एम.जी.एन. १९९१द : १५) ।

सन् १९९३ का वन कानून

सन् १९८८ के वन नियम पर आधारित सन् १९९३ का वन कानून अंततः अनुमोदित हुआ । इस कानून ने नेपाल में उपभोक्ता समूह या सामुदायिक वन निर्माण की धारणा को अधिक स्वच्छ किया है । इस कानून के द्वारा नेपाल के वन निम्नलिखित में विभाजित हुए है:

- सूरक्षित वन
- सामुदायिक वन
- पट्टा-आधारित वन
- धार्मिक वन, और
- नीजी वन

सन् १९९३ के कानून के अनूसार सामुदायिक वन निर्माण से सम्बन्धित सुविधाओं में यह वर्णित है कि जिला वन अधिकारी सामुदायिक वन के रुप में राष्ट्रीय वन के किसी भी भागको उपभोक्ता समूह को दे सकता है । कार्यान्वयन योजना के तहत ये उपभोक्ता समूह ऐसे वनों की सुरक्षा, उपयोग एवं इन्हें व्यवस्थित कर सकते हैं, साथ ही वन के उत्पादनोंका विभाजन कर सकते हैं । सामुदायिक वन को सौंपते हुए वन अधिकारी एक प्रमाण-पत्र प्रदान करेगा (अनूबंध १: सामुदायिक वन निर्माणसे संबन्धीत सुविधाएं, वन कानून. १९९३ एच.एम.जी.)

पुनः इस कानून के अनूसार "जिला वन अधिकारी, कार्यान्वयन की योजना को स्पष्ट करने के लिए, तकनीकि एवं दुसरे सहयोगों को जुटाने के लिए होता है।" साथ ही इस कानून में लचीलापन भी दिखता है, क्योंकि यह उपभोक्ता समूह को यह सुविधा प्रदान करता है कि वे, समय पर कार्यान्वयन योजना से सम्बन्धीत बिन्दूओं में संशोधन करें और जिला अधिकारी को सूचना दें ।

अनूबंध २ के, उपभोक्ता समूह के बनावट से संबन्धीत सुविधाओं (बिन्दुओं) में उपभोक्ता समूह के विषय में वर्णन किया गया है । उपर्युक्त कानून के अनूसार उपभोक्ता समूह वह है, जो वन उत्पादनों का उपभोग करता है । यह उपभोक्ता

के समूह दुसरे उपभोक्ता समूहको बना सकता है । कानून के अतिरिक्त सुविधाएं डी.एफ.ओ.के साथ पंजीकरण के तरीके का बाहरी रुप-रेखाको प्रस्तुत करती हैं। इन सुविधाओं के द्वारा वन विभाग के कर्मचारियों को सामुदायिक वन निर्माण के कार्यान्वयन के लिए स्वच्छ रुप-रेखा प्रदान किया जाता है । यद्यपि उपभोक्ता समूह के अधिकार के विषय में (वन सुरक्षा एवं उपभोग संबन्धी) नये बिल वर्णन तो करता है किन्तु इसके अनूसार स्वामित्व (वनोंपर) सरकार के पास ही रहती है । यदि स्वामित्व के परिवर्तन की शर्ते नहीं मिलती हैं तो सरकार सर्वस्व अधिकार वापस भी ले सकती है। इस तरह अंतिम शक्ति डि.एफ.ओ. को ही प्राप्त होती है ।

इस प्रकार यह बिल कानून का बढता हुआ कदम है जो निम्नलिखित क्रियाकलापको स्वीकृति प्रदान करता है:

- उपभोक्ता समूहको वन का हस्तान्तरण (नियंत्रणका अधिकार) क्षेत्रीय निर्देशकों से हटकर डी. एफ. ओ. को दिया गया है ।

- उपभोक्ता समूहद्वारा व्यवस्थित वनों की आमदानी को वन निर्माण के अतिरिक्त कार्यों में उपयोग किया जा सकता है ।

- उपभोक्ताओं को कार्यान्वयन की योजनाको तैयार करने की जिम्मवारी है।

- उपभोक्ता वन उत्पादन के मूल्यों को तय कर सकता है ।

- ऐसे नियमों से संवन्धीत होने के कारण स्थानीय जनता के लिए वनका व्यवस्थापन उनके स्वयं के विकास के लिए संभव हो सकता है ।

सन् १९९३ के वन कानून के लिए नियम एवं विधि

जहां वैध कानून नीति के बृहत् रुप-रेखा को प्रस्तुत करता है वहीं नियम एवं विधि समीक्षात्मक प्रदर्शक रुप-रेखा में है जिसका मूख्य उद्देश्य है नीति के दर्शन को यथार्थ में परिणत करना ।

नये नियम एवं नीति के अभाव में कुछ वन विभाग पूराने नियम के तहत ही काम कर रहे हैं, और कुछ वन विभाग नये नियम का इंतजार कर रहे हैं ।

ऐसी आशा की जाती है कि नया नियम हस्तान्तरण की प्रक्रिया को भविष्य में अधिक सक्रीय करेगा ।

भारत में संयुक्त वन व्यवस्था का प्रादूर्भाव

भारत में स्थिति दुसरी है, यहां नेपाल के विपरीत ९५ प्रतिशत वन राज्य सरकार के वन विभागद्वारा व्यवस्थित हैं । यद्यपि बहुत से इलाकों में मूख्य कार्य वन विभागद्वारा व्यवस्थित किये गए हैं, फिर भी सरकारी वन क्षेत्र और सामुदायिक क्षेत्र के बीच की सीमा स्थानीय समुदायों एवं सरकार के मस्तिष्क में स्पष्ट है ।

यह स्थिति विभिन्न कानूनों एवं नियमों के फलस्वरुप पैदा हुई है । एक सौ सालों से भी पहले (ब्रिटिश समय में) सामुदायिक एवं नीजी वनों का केन्द्रीयकरण हुआ और धीर-धीरे आस-पास के वन समुदायों के अधिकार खत्म होते गए । भारतीय वन कानून के अन्तर्गत अधिकार, शक्ति, कर्तव्यों आदि की जटिल परते हैं । केन्द्र और राज्य दोनों स्तरों के वन कानून अपने-अपने उपयोग एवं नियंत्रणो को निश्चित कर रहे हैं । सन् १९२६ का वृहत् रुप से औपनिवेशिक विधि पर आधारित वन कानून और अलग से राज्य कानून ने संरक्षता संवन्धी व्यवस्था प्रदान की है । इस तरह भारतीय वन निर्माण (वन) विशेषित हुआ है । जंगली जानवरों की रक्षा संवन्धी कानून के अतिरिक्त भारतीय स्वतंत्रता के बाद केवल एक वन कानून अनूमोदित हुआ है । यह है वन सुरक्षा नियम सन् १९८० जो १९८८ में संशोधित हुआ । यह वन सुरक्षा नियम एक पन्ने में ही उल्लेखित है । वन विभाग के क्षेत्रों की केन्द्रीय शक्ति किसी को भी दी जा सकती है (उपर्युक्त नियम के अनूसार) । इस शक्ति (अधिकार) का उपयोग वन निर्माण के अतिरिक्त किसी भी कार्यों के लिए किया जा सकता है।

देश के करीब एक तिहाई भाग अर्थात् ७५ मिलियन हेक्टर भुमि की सुरक्षा वन विभाग के कर्मचारियों के लिए असंभव हो गई है । इसका कारण है बडता हुआ राजस्व, उद्योगों के लिए कच्चा पदार्थ, वातावरण संरक्षण, बढती हुई जनसंख्या आदि । वन आश्रित समूदाय अर्थात् ५२ मिलियन आदिवासी समूह जिन्हे पारंपरिक वन संरक्षण एवं व्यवस्थापन का ज्ञान है उन्होने वन अधिकारियों के विरूद्ध आवाजें उठायी । (गूहा रामचंद्न १९९१, दी अनववाइट वूड्स) ये मजबुत आदिवासी (जनजाति) जातियों ने असंदिग्ध (१) ठेकेदारों और भूख्खड (अधिक खाने को इच्छूक) पशूओं से युक्त होकर भी वनह्रास को धीमा किया ।

भारत के वन विभाग के द्वारा इस तरह अधिक उपयोगीत होकर करीब ३५ मिलियन हेक्टर वन क्षेत्र अत्यंत घने आच्छादित वन के रुप में रहे । वन नाश की गति धीमी या समाप्त प्राय: होने पर भी इन वन क्षेत्रों को अत्यन्त घने आच्छादित और लगातार नाश होते हुए वनों के रुप मे वर्गीकृत किया गया। बचे हुए, जंगल के इलाके नाश के विभिन्न स्तरों में है ।

किन्तु सन् १९७० तथा ८० में वन विभाग के अधिकारी और स्थानीय समुदायों ने वन स्रोतों के निराशपूर्ण स्थिति के प्रति समान रुप से सजगता दिखाई । कुछ वन अधिकारियों (पश्चिम बंगाल, गुजरात, तथा हरियाणा के) ने यह महसूस करना आरंभ किया कि विना स्थानीय समुदायों की मदद अथवा सक्रीयता के वन की रक्षा नहीं हो सकती है । फलस्वरुप सन् १९७२ में पश्चिम बंगाल के "अरवारी" में प्रथमत: वन सुरक्षा समिति की स्थापना हुई । इस समिति को वन सुरक्षा की जिम्मेवारी दी गई (गैर-कानूनी कटान, इंधन के लिए कटान, फलते हुए चारागाहों से मूक्ति आदि) । "अरबारी" में राज्य सरकार ने साल, शोरिया, रोवूस्टा, आदि पूर्नोत्पादित भुमियों में झाडी की खेती का प्रावधान किया तथा २५ प्रतिशत आमदनी गांव सुरक्षा समिति को दी गई । यह देख कर इस प्रकार का परीक्षण (जहां की वर्षाका पानी वन सिंचाई के लिए नहर में जमा किया जाता था), शूरु किया गया । विभिन्न प्रकार के घासों को उपजाया जाने लगा। ग्रामीणों को पट्टे पर घासों को प्राप्त करने के लिए पहला मौका दिया गया। ये घास रस्सी के लिए और कागज की फैक्टरी में कच्चे पदार्थ के रुप में काम आते हैं । पहले वर्ष में घास की उपज इतनी अधिक थी कि ये अधिक भार पट्टे पर नहीं ले पाये ।

वन आश्रित समुदायों के बीच वन सुरक्षा आंदोलन संयुक्त रुप में (एक साथ) विभिन्न क्षेत्रों में आरंभ हुए । इसके अन्तर्गत "चिपको आंदोलन" (उत्तराखण्ड में) और सौ से अधिक विहार और उडीसा में जनजाति वन सुरक्षा समूह के बीच विकसित हुई । इन जन-जातियों का जीवन वन उत्पादनों पर ही निर्भर करता है इसलिए इन्होने कम होते हुए जंगल के उत्पादनों के प्रति विभिन्न प्रतिक्रियाएं प्रस्तुत की ।

सन् १९८८ की वन नीति एवं जुन १, १९९० की विज्ञप्ति

नाटकीय रुप में नीति भी बदल रही थी । यह स्पष्ट था कि सामाजिक वन निर्माण कार्यक्रमो एवं कृषि वन निर्माण कार्यक्रम वन क्षय को रोकने में सफल नहीं हुए थे । इन कार्यक्रमोंद्वारा कीमती वन उत्पादनों पर अधिक ध्यान दिया

जा रहा था जिससे गरीब सीमान्त ही रहे । वन अधिकारियों के नये प्रयास, और अपने जंगलों की रक्षा के लिए समुदायों के द्वारा आरंभ किये गए प्रयास, सामाजिक वन निर्माण के कार्यक्रम के कारण अधिकारियों और लोगों के बीच बढता हुआ अन्तरक्रियाकलाप और नयी नीति ने सरकार अन्तर्गत केन्द्र में दबाव डालने का काम किया । यह केन्द्र एन.जी.ओ. (गैर-सरकारी संस्था) से सहयोगित था । यह केन्द्र संयुक्त वन व्यवस्थापन के बिज्ञप्ति के रुप में परिवर्तित हुआ । यह विज्ञप्ति भारत सरकार के द्वारा सन् १९९० जुन १ में प्रकाशित हुई ।

इस विज्ञप्ति के अनूसार

सन् १९८८ की केन्द्रीय वन नीति, वन सुरक्षा एवं उत्पादन में लोगों की सक्रीय सहभागिता के सम्बन्ध में बिचार करता है । इसके अनूसार वन उत्पादन पहले वन पर निर्भर लोगों को मिलना चाहिए । इस विज्ञप्ति ने सभी राज्यों को उपर्युक्त रुप-रेखा के आधार में सामुहिक वन व्यवस्थापन के लिए प्रेरित किया है । यह एन.जी.ओ. को अनूदान-कर्ता और मध्यस्थ-कर्ता के रुप में भी प्रोत्साहित करता है । साथ ही चौदह राज्यों ने (प.बंगाल, गुजरात, हरियाणा, उडिसा, राजस्थान, बिहार, मध्यप्रदेश, त्रिपूरा, जम्मु और काश्मिर) वन विभाग और स्थानीय समुदायों के बीच मतभेदको खत्म करने के लिए नियमों को पास किया है ।

उपयुक्त समूदाय-स्तर के संस्थाओं के लिए खोज

नेपाल और भारत दोनों स्थानो में उपयुक्त समूदाय-स्तर की संस्थाओं के लिए विचार किये गए । ये विचार दो बिन्दूओं पर केन्द्रित हुए (स्वदेशीय अनौपचारिक सामुदायिक व्यवस्था प्रणाली और औपचारिक बाह्य रुप से विकसित संस्थाएं) इन दोनों मे से, सामुदायिक वन निर्माण के कार्यक्रम की जिम्मेवारी लेने के लिए, उपयुक्तता की परख ।

स्वदेशीय सामुदायिक वन निर्माण कार्यक्रम बनाम बाह्य रुप से विकसित संस्थाएं

नेपाल और भारत में सामुदायिक वन निर्माण कार्यक्रम पर ध्यान दिए जाने पर पता चला कि बहुत से सामुदायिक वन निर्माण कार्यक्रम सरकार रक्षित भुमियों की रक्षा कर रहे हैं । नेपाल में "किपत" और "तालूकदारी" प्रणाली के अन्तर्गत

सरकार ने कुछ साधारण शर्तों के आधार पर गांव वालों को व्यवस्थापन की जिम्मेवारी दी ।

भारत ने भी कई पारंपरिक सामुदायिक व्यवस्थापन जैसे "कोआपरेटिव आफ हिमांचल प्रदेश", "वन पंचायत" तथा उत्तर प्रदेश एवं गोआ के समुदायोंको अस्तित्व प्रदान किया । "इंडियन इन्स्टिच्युटस आफ फारेष्ट मैनेजमेन्ट" के विद्यार्थीयों नें भी इसकी खोज में काफी मदद की । इन सभी समुदायों की भिन्न-भिन्न विशेषताएं है । केवल बिहार और उडिसा में ही ये समूदाय २०,००० हेक्टर वन भूमि की सुरक्षा कर रहे हैं । स्वयं आरंभ हुए स्वदेशीय समुदायों के अध्ययन और अस्तित्व आदि की आवश्यकता है ।

समूदाय कौन है? स्तर और समूह के आधार पर सामुदायिक वन निर्माण कार्यक्रम का निर्णय

पंचायती राज (भारत में) के आंदोलन के साथ बहुत से लोगो ने यह महसूस किया कि वन सुरक्षा एवं व्यवस्थापन स्थानीय पंचायत के माध्यम से होनी चाहिए । वन अधिकारियों एवं ग्रामीणों ने यह जोर दिया कि वन सुरक्षा सबसे छोटे स्तर द्वारा अर्थात् उन लोगों के द्वारा होनी चाहिए जो वन स्रोतों का अधिक उपयोग करते हैं । इस तरह बहुत स्थानों में "उप पंचायत-स्तर", "उप गांव-स्तर," पर इसकी व्यवस्था है ।

नेपाल में सामुदायिक वन कार्यक्रम के नियोग में उन स्तरों में बहुत सारी गलतियां हुई जहां कि व्यवस्थापन को नियंन्त्रित होना चाहिए था । पहले पंचायत को सामुदायिक वन व्यवस्थापन के लिए उपयुक्त समझागया था किन्तु अधिकतर वन के छोट-छोटे टूकडों का नियन्त्रण पंचायत के निचले स्तरों (इकाईयों) द्वारा नियंत्रित किया गया था । इन इकाईयों का निर्माण पंचायत के अस्तित्व में आने से बहुत पहले हो चूका था । पंचायत सामुदायिक वन निर्माण के कार्यक्रमों के लिए उपयुक्त इकाई के रुप में प्रस्तुत नहीं हो पाया था ।

इस अवस्था तक यह स्पष्ट नही हो पाया था कि वन के उपभोक्ता कौन हैं? यद्यपि इतना स्पष्ट था कि महिलाएं एवं निर्धन लोग असंदिग्ध रुप में इसके उपभोक्ता थे किन्तु व्यवस्थापन में इनकी पहूंच न के बराबर थी । गांव-स्तर पर पुरूष प्रधान नेताओं से अनूप्राणित लोगों के द्वारा व्यवस्थापन समिति की स्थापना की कोशिश असफल हुई । इस तरह समूदाय के विषय में स्पष्ट

धारणा धूमिल ही रही । निम्नलिखित बिन्दूओं में समूदाय के विषय में धारणा इस प्रकार है ।

- "स्थानीय समूदाय" (अर्थात् लोगों का ऐसा समूह जो सामाजिक सीमा रेखा से घिरे हैं, तथा एक साथ मिलकर कार्य करने के लिए समर्थ हैं।)
- स्थानीय समूदाय एवं स्थानीय वन उपभोक्ता पर्याय थे ।
- वन उपभोक्ता जनता की सभा में वन व्यवस्थापन के लिए आ सकते थे।
- जो लोग सभा में वन व्यवस्थापन के लिए उपस्थित होते थे वे खूले रुप में इमान्दारी से सभा में बोल सकते थे ।
- पहली सभा में बनी हुई गांव व्यवस्थापन समितिने, वन उपयोग, व्यवस्थापन, उपभोक्ताओं के कर्तव्य अधिकार के विषय में, बिचार किया था ।

उपभोक्ता कौन हैं?

सामुदायिक वन निर्माण कार्यक्रम में विकास के लिए वन व्यवस्थापन की जिम्मेवारी उपभोक्ताओं को है, जिससे उपभोक्ता ही निर्णय लेने एवं बिचार करने के लिए प्रथम इकाई हैं । नेपाल के उपभोक्ता को निम्नलिखित रुप में परिभाषित किया गया है ।

वे लोग जो परंपरा से वन का उपयोग चारागाह, सांस्कृतिक क्रियाकलाप आदि के लिए करते हैं, वे उपभोक्ता हैं । गैर-कानूनी उपभोक्ता वे हैं जो प्राथमिक और द्वितीय उपभोक्ताओंद्वारा पहचाने जाते हैं । प्राथमिक उपभोक्ता वे है जो पूर्ण रुप से वन स्रोतों पर निर्भर करते हैं । द्वितीय उपभोक्ता वे है जो समय-समय पर किसी खास उत्पादन के लिए वनों पर निर्भर करते है, अथवा जिन्हे पूर्ण उत्पादन ग्रहण करने का अधिकार प्राप्त नहीं होता है।

(सामुदायिक वन निर्माण कार्यक्रम की प्रदर्शक पंक्तियां १९९२)

यह सामुदायिक वन निर्माण कार्यक्रम की प्रदर्शक पंक्तियां दो दुसरे पक्षों पर भी प्रकाश डालती है । ये दोनो पक्ष वन व्यवस्थापन में सहयोग देते हैं:

१. आवश्यकता आधारित समूह

ये वन व्यवस्थापन के साथ-साथ अपनी आवश्यकता के लिए वनों से जूडे होते हैं । जैसे लोहार, पशूपालक, काष्ठकार महिलाओं आदि का समूह ।

२. स्वदेशीय व्यवस्थापन प्रणाली

स्थानीय वनों का व्यवस्थापन और दुसरे सामुदायिक स्रोतों के लिए स्थानीय समुदायों के द्वारा आरंभ किया हुआ सामाजिक और तकनीकि व्यवस्था ।

निम्नलिखित पंक्तियां उपभोक्ता समूह के बनावट की प्रणाली को प्रस्तुत करती हैं ।

अस्तित्व से पहले की अवस्था

यह उपभोक्ता समूह के बनावट से पहले की वह अवस्था है, जिसमें सभी प्रकार के उपभोक्ता (प्राथमिक, द्वितीय) और उनकी जरुरतों आदि का विश्लेषण होता है ।

खोज (छानबिन) की अवस्था

उपभोक्ताओं के सामाजिक, तकनीकि एवं क्षेत्र के विषय मे सूचना इकठ्ठी करने की अवस्था ।

आपसी समझदारी की अवस्था

उपभोक्ताओं के बीच वन व्यवस्थापन के विषय में बिचारों का आदान-प्रदान। कार्यान्वयन की योजनाओं की तैयारी एवं व्यवस्थापन की जिम्मेवारी उपभोक्ताओं को हस्तान्तरण करना ।

नियोग की अवस्था

उपभोक्ता समूह और क्षेत्रीय कर्मचारियोंद्वारा स्वीकृत योजनाओं का कार्यान्वयन।

उपभोक्ताओं समूहो के साथ-साथ योजनाओं का पूनर्मुल्यांकन करना ।

नियंत्रण में साझेदारी एवं परिवर्तन

भारत और नेपाल वन के उपर स्वामित्व एवं नियंत्रण के संदर्भ में एक दुसरे से भिन्न है । भारत में संयुक्त वन व्यवस्थापन में स्थानीय समूदाय और सरकार दोनों की सहभागिता है । यह सहभागिता नियंत्रण के स्तर में असमान है । यद्यपि समूदाय सुरक्षा और स्वामित्व के विषय में जिम्मेवारी को बहन करता है फिर भी अंतिम निर्णय वन विभाग के अधीन ही है । अधिकतम राज्यों में समुदायों को "चाराघास" गैर बडा काष्ठ उत्पादन आदि के पूर्ण उपज का २० प्रतिशत से ८० प्रतिशत तक ही दिया जाता है । यह अलग बात है कि यह प्रतिशत अलग(अलग राज्यों में भिन्न-भन्न है । किन्तु नेपाल में खास कर पहाडी इलाकों में वन के उपज पर उपभोक्ता समूहका शत प्रतिशत अधिकार है, और नियंत्रण भी उनके हाथ में है ।

नेपालका यह साहसपूर्ण कदम भारत के लिए एक शिक्षा है जहां कि वन विभाग समूदाय के नियंत्रण और सुरक्षा के अधिकार को बढाने से हिचकते हैं। नेपाल में भी तराई इलाकों के "साल" आदि के वनों के उपर समूदाय का पूर्ण अधिकार एवं नियंत्रण नहीं है

दूर्भाग्यवश नेपाल के प्रशासन में यह सोचा जा रहा है कि यदि वन के व्यवस्था का अधिकार समुदायों को दिया जाएगा तो वन विभाग में अधिक कर्मचारियों की आवश्यकता नही है ।

नेपाल और भारत में सामुदायिक वन निर्माण कार्यक्रम इस प्रस्तावना से शूरु हुआ था कि समुदायों के आधारभुत जरुरतों के लिए वन की सुरक्षा और व्यवस्था का अधिकार दिया जाना चाहिए । नेपाल में यह धारणा बनती जा रही है कि वन विभाग के कर्मचारी वन उत्पादन (जैसे घर बनाने योग्य लकडियोंका उत्पादन) में सहयोग कर सकते हैं । "संयुक्त वन योजना" भारत में, यह महसूस किया कि वन के उपज का आवश्यक रुप में विभाजन होना चाहिए । झाडी व्यवस्थापन के आधार में "साल" की खेती में बढोतरी की आशा की जा रही है किन्तु बराबर रुप में बांटना कठिन काम है ।

एक बार जब आमदानियों का नियंत्रण समूदाय उपभोक्ता समूह को दे दिया जाता है तो यह प्रश्न उठ्ता है कि समूह अन्तर्गत कौन नियंत्रण करता है, और कौन आमदानी को प्राप्त करता है । यहां लिङ्ग की समानता, निर्णय में औरतों की सहभागिता, और सीमान्त समूहों की लगातार देखरेख करने की आवश्यकता है । न तो सामुदायिक वन कार्यक्रम नेपाल में और न ही संयुक्त वन व्यवस्था भारत में इन बिन्दूओं को ठोस रुप में प्रस्तुत कर पाये है । दोनो (सा.व, सं.व.व्य.) ने महिलाओं के लिए, वन संबन्धी बिन्दूओं पर विचार विमर्श के लिए, अलग अदालत बनाने को जरुरी समझा है । समुदायों में महिलाओं की उपस्थिति की आवश्यकता को समझा है (एक खासहद तक) । वन उत्पादन से प्राप्त रकम घर संवन्धी खाते मे संयुक्त अथवा पुरूष सदस्य के नाम से जमा हो, ऐसा भी आवश्यक समझा है । किन्तु समानता (स्त्री और पुरूष में) और अधिक लागू करने के लिए अधिक अध्ययन और अनूसंधान की आवश्यकता है।

सामुदायिक वन निर्माण कार्यक्रम एवं संयुक्त वन व्यवस्था का नियोग

सामुदायिक वन निर्माण के व्यवस्थापनका निर्णय हो जाने पर (कि कौन करेगा) तव वन की व्यवस्था कैसे हो इसका प्रश्न उठता है । नेपाल और भारत में योजनाओं की भुमिका भिन्न-भिन्न है ।

सामुहिक व्यवस्थापन योजना

नेपाल में कार्यान्वयन की योजनाएं डी.एफ.ओ. के सम्मूख अनूमोदित होने के लिए तैयार की गई हैं । ये योजनाएं उपभोक्ता समूहद्वारा बनायी गयी हैं , न कि पेशेवर वन अधिकारियोंद्वारा । इस योजना को तैयार करने के लिए उचित समय दिया गया और इसमें सभी प्रकार के उपभोक्ता समूह के सदस्य शामिल हैं । इसे "हमारे वन के लिए" शीर्षक अन्तर्गत तैयार किया गया है । यह योजना डी.एफ.ओ. और प्रधानपंच (पंचायती राज तक) द्वारा अनूमोदित हुआ । इस योजना के तहत उपभोक्ता समूह को वन संरक्षण का अधिकार दिया गया है। उपभोक्ता समूह के अन्तर्गत कार्यकारीणी समिति आदि का भी चयन किया गया।

भारत में एक राज्य से दुसरे राज्य में योजनाएं भिन्न-भिन्न हैं । सुरक्षा, सामुदायिक-स्तर पर संस्थाओंका निर्माण, एवं कुछ भिन्न प्रकार के विकास के कार्यक्रम, और छोट-छोटे दुसरे कार्यक्रम पर जोर दिया गया है । "संयुक्त वन व्यवस्थापन" के अधिकतर कार्यक्रम सुरक्षा की अवस्था से अधिक उपर नही गए

हैं । पश्चिमी बंगाल अपवाद के रुप में है । गुजरात और राजस्थान आदि ने विकास के सहयोगी क्रियाकलाप को विकसित किया है । इन राज्यों ने केवल जंगल की व्यवस्था तक ही अपने आपको सीमित नहीं किया है बल्कि उर्जा तकनीकि, उर्जा बचत तकनीकि, सडक, कूवे, विद्यालय आदि के निर्माण पर भी जोर दिया है । किन्तु सबसे जरुरी बात यह है कि "सामुदायिक वन निर्माण कार्यक्रम" और "संयुक्त वन व्यवस्थापन" का दुसरे विभागों के साथ ताल-मेल रखना ।

वन कर्मचारियों ने महसूस किया है कि उपयुक्त क्रियाकलाप के कारण ग्रामीण लोग वन विभाग से गांव की पूरी उन्नति की आशा करने लगे हैं।

तकनीकि व्यवस्था

यह आवश्यक है कि पारंपरिक सुरक्षा (वन की सुरक्षा केवल) जैसे दृष्टिकोण से हटकर वन व्यवस्थापन की ओर ध्यान केन्द्रित किया जाए । नेपाल की बहुत सारी संस्थाएं खास कर "कोशी हिल्स कम्युनीटी फारेष्टी« प्रोजेक्ट" उपभोक्ता समूह और वन विभाग के कर्मचारियों को तकनीकि प्रशिक्षण प्राप्त कर वन की व्यवस्था करने के लिए मदद कर रही है । इन संस्थाओंद्वारा प्रशिक्षण के लिए कुछ वन प्रदेश को चूना जाता है और वताया जाता है कि किस प्रकार से इसकी व्यवस्थापन के उद्देश्य को उचित मात्रा में प्राप्त किया जा सके । इस तरह उपभोक्ता समूह भी प्रत्येक वन क्षेत्र में ऐसी भुमि प्रदेश चूनकर योजना के कार्यान्वयन की कोशिश कर रहे है । रेन्जरों (वनपाल) को अल्पकालीन प्रशिक्षण दिया जा रहा है "को.हि.क.फा.प्रो." इन बिन्दूओं पर ध्यान दे रही है:

१. जंगल की उन्नत समीक्षा एवं उसका वर्णन ।
२. झाडी उपज प्रणाली का उपयोग ।

अपारंपरिक जंगल निर्माण के कार्यक्रमों का आरंभ, कृषि आधारित वन, घर बनाने के लिए उपयुक्त लकडियों के अतिरिक्त, अन्य लकडियों का उत्पादन, तथा बांस और घांस आदि का उत्पादन । इस तरह नर्सरी आदि बनाने के लिए प्रशिक्षण उपभोक्ताओं के लिए भी उपलब्ध है ।

वन विभाग भी उनके लिए बीजों, पौधाओं आदि को उपलव्ध करा रही है । विभिन्न प्रकार के उन्नत वन निर्माण के कार्यक्रमों आदि का संचालन हो रहा

है । भारत में इस बात के विषय में अनूसंधान हो रहे हैं कि किस तरह के पारंपरिक अभ्यासोंको संशोधित किया जाए । सौभाग्यवश "काउन्सिल फार फारेष्ट्री" विकसित संस्कृति व्यवस्थापन रुप-रेखाका अनूसधान करने के लिए योजनाए बना रहा है । इसमें संयुक्त वन व्यवस्थापन के समुदायों के विचार भी शामिल हैं ।

मूल्य बृद्धि और आमदानी का उत्पादन

नेपाल में "नेपाल आंस्ट्रेलिया काम्युनीटि फारेस्ट्री" तथा "कोशी हिल्स काम्युनीटि फारेष्ट्री प्रोजेक्ट" ने बाजार की क्षमता को देखते हुए रिपोर्ट पेश कि है । खास कर काठमाण्डु में घर बनाने योग्य लकडी और अतिरिक्त लकडियों के उद्योग की क्षमता हैं जिसमें औषधि के लिए जडीबूटी के उद्योग भी शामिल हैं ।

भारत में "छोटे वन उत्पादन" नाम के व्यापार और व्यवस्थापन का लंबा इतिहास है । इन उत्पादनों नें स्थानीय समुदायों की सहभागिता है, इसमें औषधि के पौधे, "तसर सिल्क" का उत्पादन, "लाह" उत्पादन "मशरूम" का उत्पादन, बीडी के पत्तों की खेती और दुसरे कई क्रियाकलाप शामिल हैं । बाजार के उद्योगों और व्यापार के विकास के लिए यह चूनौति है । यह चूनौति सामुदायिक वन क्षमता पर प्रभाव न देकर उनलोगों को अतिरिक्त आमदानी दिलाता है जो मूख्य रुप से वन पर निर्भर करते हैं, खास कर महिलाओं और जनजाती समुदायों को ।

सामुहिक वन निर्माण कार्यक्रम के लिए प्रशिक्षण

पुर्व अनूभव "वन समिति की स्थापना" और वन उपभोक्ताओं की पहचान पूर्वाधार में होने पर, "सामुदायिक वन निर्माण कार्यक्रम" ओर "संयुक्त वन व्यवस्थापन" कार्यक्रम ने वन विभाग को वैचारिक परिवर्तन के सभी स्तरों में नयी योजनाओं को लागू करने के लिए प्रेरित किया है । "सामुदायिक वन निर्माण" के कार्यक्रम को विस्तृत रुप मे प्रतिध्वनित होने के लिए सिलसिलेवार प्रशिक्षण के कार्य क्रम की आवश्यकता है । भारत के विभिन्न राज्यों ने विभिन्न प्रकार के प्रशिक्षण के कार्यक्रमको आरंभ किया "इन्स्टीच्युट आंफ बायो सोशल रिसर्च एण्ड डेभलपमेन्ट" ने "संयुक्त वन व्यवस्थापन" के क्षेत्र में बहुत काम किया है जैसे, उच्च पदाधिकारियों के साथ निम्न पदाधिकारियों के प्रशिक्षण की

व्यवस्था की है । हरियाणा और गुजरात में सामुदायिक समूहों के प्रशिक्षण की भी व्यवस्था है ।

नेपाल नें प्रशिक्षण के पहले स्तर में क्षेत्र आधारित सामुहिक कार्यशालाओं का आरंभ किया । प्रत्येक व्यक्ति जो कार्यशाला में भाग लेता है उसे प्रजातान्त्रिक शिक्षा के दृष्टिकोण की और प्रोत्साहित किया जाता है ।

गांव-स्तर के उद्योगों के अन्तर्गत नया विकाश

उपभोक्ता समूह के शक्ति और निर्णय की क्षमता को बढाने के लिए नेपाल में सचेत कदम बढाएं गए हैं और भारत में सीमित । नेपाल के कुछ इलाकों में नित्य रुपमे उपभोक्ता समूह भविष्य की योजनाओं आदि बनाने के लिए सीमा के स्तर में मिलते हैं । कुछ दुसरे उदाहरणों में दूसरी संस्थाओंद्वारा दिए गए सेवाओं को और अधिक रुप से प्राप्त करने के लिए कुछ उपभोक्ता समूहों ने स्वयं के एन.जि.ओ. के रुप मे पंजिकृत करनेका निर्णय लिया । फलस्वरुप गुजरात (लोकवन कल्याण परिषद्) और उडिसा में इस तरह की अनेक संस्थाएं काम कर रही हैं । ये समूह कभी कभी विभिन्न समूहों के बीच उत्पन्न मतभेदों का भी विश्लेषण करती हैं । नेपाल में द्वितीय सामुदायिक वन कार्यशाला गोष्ठी में सर्वप्रथम उपभोक्ता समूह ने नीति निर्माण कर्ताओं के समक्ष अपने विचार प्रस्तुत किये ।

वन नौकरशाही: वर्तमान समस्याएं एवं भविष्य की दिशाएं

जबकि सामुदायिक वन और संयुक्त वन व्यवस्थापन को एक स्तर में स्वीकार किया गया है, वहीं अभी भी भारत और नेपाल के वन विभाग इन महत्व पूर्ण परिवर्तनों को अन्तर संबन्धीत करने के लिए प्रयास के प्रथम चरण में ही है। नेपाल के नौकर शाही में कर्मचारियोंकी छटाई और परिवर्तन ने, अव्यवस्थित तरीके से कर्मचारियों के बीच नये अधिकार और शक्ति का विभाजन किया, फलस्वरुप कुछ पूराने कर्मचारियों को समय से पहले ही अवकाश लेना पडा । चुंकि विभाग को अब पुरे नेपाल में सामुदायिक वन कार्यक्रमों की जिम्मेवारी लेनी है, इसलिए विभाग की पूरी रुप(रेखा को नये कार्यक्रमों के लिए उपयुक्त होने के लिए बदलना होगा । विभाग जो कि प्रधान नीति निर्णायक की भुमिका में था उससे अब सलाह दाता के भुमिका की उम्मीद की जा रही है । इस बदलाव के कारण विभाग के अंदर बहुत सी विरोधी बातें आती है जैसे

अधिकारोंका विकेन्द्रीकरण एवं क्षेत्रीय कर्मचारियों की निर्णायक भुमिका । नौकरशाही के अन्तर्गत रकम और नियंत्रण के दुसरे ढांचे भी इस तरह से बनाए गए है कि ये सामुदायिक वानिकी के नियोग में विरोधी होते हैं । इन्हें (रकमों और नियन्त्रणो को) स्थानीय आवश्यकता के अनूसार परिवर्तित अथवा लचिलेपन से युक्त होने की जरुरत है । "कोशी हिल्स काम्यूनिटि फारेष्ट्री प्रोजेक्ट" ही उन संस्थाओं में से है जो वन अधिकृतको स्थानीय बजेट को लचीला बनाने में मदृद कर रहा है ।

भारत में जबकि नये राज्य स्तरीय एकीकृत वानिकी संगठन वन प्रवन्ध को अधिक महत्व दे रहा है, वहीं सामाजिक वानिकी एवं भुमि संरक्षण के लिए अलग विभाग होने का प्रश्न उठ्ता है । संयुक्त वन प्रवन्ध और सामुदायिक वन निर्माण कार्यक्रम का कम समय में प्रभावकारी नियोग क्षेत्रीय कर्मचारियों को बाताबरण में अधिक कार्य करने के लिए बाध्य करता है । कुछ विभागीय अधिकारी विभिन्न कर्मचारियों को विभिन्न शाखाओंसे लाकर बढ्ते हुए सामुदायिक वानिकी समितियों को नियंत्रित करने के लिए तैयार करने को, महत्व दे रहे हैं।

ये नये तरीके कार्य प्रणाली को बदलने के लिए बाध्य कर सकते हैं । मासिक तलव और पदोन्नति सीमित हैं, कर्मचारियोंका बार-बार तवादला भी स्थानीय संबन्धो में स्थायित्व लाने में विरोधी है ।

भारत में गैर सरकारी संस्थाओं की स्थिति भी विचारणीय है कि ये संस्थाएं कौन सी भुमिका निभाती हैं अथवा इन्हें कैसी भुमिका निभानी चाहिए अर्थात् ये अनूदान दाता, सामुदायिक वानिकी के व्यवस्थापक हैं या ये क्षेत्रीय स्तर पर वानिकी के कार्यो में सलग्न हैं, या होने चाहिए ।

सामुदायिक वानिकी के प्रभावकारी नियोग के लिए यह आवश्यक है , कि नौकरशाही क्षेत्रीय स्तरके जरुरतों के लिए ढांचों, योजनाओं और प्राथमिकताओं को तैयार करने में सक्षम हो । इसके लिए नौकरशाही के अन्तर्गत ऐसी निर्देशिका की जरुरत है जो सामुदायिक वानिकी के तरीकों और इसके भौतिक पक्षों की समीक्षा कर सके ।

भारत के उपभोक्ता समूह से प्राप्त अनूभव नेपाल के लिए महत्वपूर्ण हो सकते हैं । अधिकतर राज्यों में खासकर पश्चिम बंगाल, गुजरात तथा हरियाणा के उपभोक्ता समूह, जिसमे कि वन विभाग के कर्मचारी, गैर सरकारी कर्मचारी और विद्धत वर्ग शामिल हैं, का गठन राज्यस्तर पर हुआ है । ये उपभोक्ता समूह

संयुक्त वन प्रवन्ध के नियोग में मूख्य मूद्दों के अनूसंधान, निर्देशिका एवं विकास के उपर पूनरावलोकन की ओर ध्यान दिलाता है । उपर्युक्त उल्लिखत तीनों राज्यों के उपभोक्ता समूहों ने क्षेत्रीय स्तर के अनुभवों पर आधारित नियमों का संशोधन किया है या संशोधन करने का विचार दिया है । एक राष्टीय स्तर का संयुक्त वन प्रवंध अनूसंधान विभिन्न राज्यों के अनूसंधानात्मक क्रियाकलापों के उपर काम कर संयुक्त वन प्रबंध के वातावरणीय, आर्थिक एवं संस्थागत मूद्दों पर प्रकाश डालने की कोशिश कर रहा है ।

सामुदायिक वानिकी एवं संयुक्त वन प्रवंध की प्रगति

सन् १९८७ से लेकर आज तक नेपाल के वन विभाग एवं गैर सरकारी कर्मचारियां ने सामुदायिक वानिकी के लिए सक्षम उपभोक्ता समूह का गठन और कार्य के तरीकों के विषय में जानकारी प्राप्त करने में इतना लंम्बा समय लगाया है । किन्तु यह कहना कठिन होगा कि उपभोक्ता समूह का गठन और कार्य प्रणाली होने के कारण पुरे नेपाल में सामुदायिक वानिकी का प्रसार सरलता से हो जाएगा । आज तक केवल १,९०० "वन उपभोक्ता समूह" का गठन हुआ है, जिसमें ५२५ उपभोक्ता समूह कार्यान्वयन की योजनाओं में सम्मिलित हैं और जिन्हे वन का स्वामित्व दिया गया है (जोशी, १९९३) करीव ९०,००० हेक्टर सरकारी वनों को सामुदायिक वन में हस्तांतरित किया गया है (के. कनेल १९९३), उपर्युक्त तालिका नेपाल स्वदेशीय और अनौपचारिक उपभोक्ता समूहोंको शामिल नही करती है जो वन संरक्षण में कार्यरत थे । वर्तमान समय में वन विभाग द्वारा बडी तेजी से कई उपभोक्ता समूह गठित हुए हैं । उपभोक्ता समूहोंका इस प्रकार से गठन यह प्रदर्शित करता है कि वन अधिकारी सामुदायिक वानिकीको समर्थन देने के लिए कितने उत्सूक हैं, और साथ ही नीति की सबलता में उपभोक्ता समूहों के विश्वास को भी दिखाता है । किन्तु कुछ विचारों के अनूसार वन विभाग अधिक उपभोक्ता समूहों को समर्थन देने में असमर्थ है और यह देखना है कि किस तरह यह वन विभाग नेपाल के "अष्ट पञ्च वर्षिय" योजना (१९९२-१९९७) अवधि के भीतर ५,००० उपभोक्ता समूहों को गठित कर सकेगा और साथ ही २५२,००० हेक्टर वन भुमि का हस्तातरण सामुदायिक वन के रुप में कर सकेगा कि नहीं ।

भारत में भी "संयुक्त वन व्यवस्थापन" अथवा "प्रबन्ध" के प्रगति के उपर विचार (दुविधा) हो रहे हैं । उडीसा में अन्य राज्यों की अपेक्षा अधिक तेजी से उपभोक्ता समूहों (६,०००) का पंजीकरण कुछ हि महिनों में हुआ है । उपर्युक्त

दूविधापूर्ण विचार एक दुसरे विचार को जन्म देता है कि संयुक्त वन प्रवन्ध घने जंगलो पर लागू होने चाहिए कि उन वन जमीनों पर जहां कि भुमि ४० प्रतिशत पेडों से ढकी हुई है (अर्थात् नष्ट नही हुए वनों पर) । मध्य प्रदेश में उपभोक्ता समूहों का गठन तेजी से और प्रभावकारी रुप में हुआ है । अभी भी स्वयं संचालित संरक्षण के तरीकों एवं सरकार द्वारा संचालित क्रियाकलापों के फैलाव और नियोग के विषय में बहुत कुछ जानना बांकी है ।

निष्कर्ष

नेपाल में "सामुदायिक वानिकी" एवं भारत में "संयुक्त वन प्रवंध" दोनों ही उभरते हुए वन व्यवस्थापन के तरीकों को प्रस्तुत करते हैं । नेपाल में तथा भारत के आदिवासी इलाकों में अभी भी "स्वदेशीय वन व्यवस्थापक" और "संरक्षक" पभोक्ता समूह कार्यरत हैं । इनमें से बहुत कम ही वन विभाग से जूडे हैं । औपचारिक और पंजीकृत उपभोक्ता समूह भी विभिन्न गैर सरकारी संस्थाओं (नेपाल में) के कारण और राज्यों (भारत में) के कारण, एक दुसरे से भिन्नता रखते हैं । दोनों देशों के लिए यह आवश्यक है कि वे सोचे कि कैसे स्वदेशीय व्यवस्थापन प्रणाली को अपने कार्यक्रमों में लचीलेपन के साथ शामिल करें ।

दोनो देशों की सामुदायिक वानिकी की योजनाएं बहुत सी बातों में समानता रखती है, जिन्हें मौलिक सिद्धान्तों के रुप में लिया जा सकता है

- वन उपभोक्ताओं की सावधानीपुर्वक पहचान (प्रथम और द्वितीय)
- व्यवस्थापन के अभ्यासों में ढांचा तैयार करने एवं नियोग में उपभोक्ताओं के महत्व की शंकाहीन पहचान,
- स्रोतों के संरक्षण के लिए स्थानीय लोगों के अधिकार एवं जिम्मेवारी की रुप रेखा को बनाना,
- व्यवस्थापन के तरीके के विभिन्न मूद्दों पर सलाह देने योग्य बनाने के लिए क्षेत्रीय वन विभाग के कर्मचारियों को सामाजिक एवं प्राविधिक प्रशिक्षण ।
- स्थानीय संस्थाओं एवं वन प्रबंध कौशल का विकास ।

- कार्यान्वयन की योजना, छोटी योजना एवं गतिशील योजनाओं के माध्यम से निर्णायक शक्ति का विकेन्द्रीकरण ।

- उपभोक्ता समूह के बनावट एवं विकास में सहयोग देने के लिए क्षमता में वृद्धि करना ।

उपर्युक्त दोनो ही कार्यक्रमो की भिन्नताएं, सीखने और समझने के लिए बहुत अच्छा मौका उपलब्ध कराती हैं । क्योंकि इन कार्यक्रमों के माध्यम से विषमता की क्षमता का पता चलाता है और ये उन मौकाओं की और इशारा करती हैं जिनके द्वारा इन दोनों कार्यक्रमों में विकास हो सकता है । नेपाल में पहाडी इलाकों में वन उत्पादन का १०० प्रतिशत मूनाफा स्थानीय समुदायों को दिया जाता है और वन विभाग के कर्मचारियों की सलाह से वन व्यवस्थापन का नियंत्रण भी ये समूदाय ही करते है । भारत में संयुक्त वन प्रवंध शायद उपर्युक्त प्रणाली (१०० प्रतिशत मूनाफा आदि) की दिशा में परवर्तन की अवस्था में है। दुसरी ओर जब तक वन विभाग के कर्मचारियों को मूनाफा (प्रोत्साहन) दिया जाता है तब वे शायद अधिक इमान्दारी (रूचि) के साथ समुदायों को शक्तिशाली ठेकेदारों एवं काठ के तस्करों के खिलाफ शक्ति प्रदान कर सकते हैं और प्राविधिक मार्ग दर्शन भी उपलब्ध करा सकते हैं । नेपाल में इस तरह का प्रोत्साहन देने व्यवस्था नहीं है ।

इन दोनों देशों के दोनों कार्यक्रमों की दुसरी महत्वपूर्ण भिन्नता यह है कि नेपाल में उप ग्राम स्तर की उपभोक्ता समूहें जो कि प्रशासनिक सीमाओं से बंधी नहीं है, सामुदायिक वानिकी को अपने अन्तर्गत लेने के लिए कार्यरत संस्था के रुप में हैं । भारत में विभिन्न प्रकार के उपभोक्ता समूह कार्यरत है किन्तु इन ग्राम वन समुदायों को तहसील ग्रामों एवं ग्राम पंचायतों के साथ जोडने की कोशिश है । जिससे अधिक बडे एवं एकीकृत सामुदायिक संस्थाओं की स्थापना हो सके । विभिन्न राज्यों में सामुदायिक संस्थाए सहकारी संस्थाओं के रुप में पंजीकृत है जिससे ये कानूनी अवस्था एवं कुछ स्वावलम्बनों को भी हासिल कर पाये हैं ।

दोनों ही देश इन कार्यक्रमों के कार्यान्वयन की अवस्था में सम्मिलित योजनाएं, कार्यान्वयन की योजनाओं एवं गतिशील योजनाओं के विकास के लिए इस क्षेत्र में विचारों के आदान प्रदान से लाभान्वित हो सकते हैं । जबकि नेपाल वन उत्पादन के औद्योगिक एवं मूनाफा में भागेदारी के पहलूओं पर विचार ही कर

रहा है, वहीं भारत में काफी पहले से ही वन उत्पादन के विक्रय द्वारा कर प्राप्त करने की प्रथा है, इस प्रथा के अध्ययनद्वारा नेपाल लाभान्वित हो सकता है । किन्तु यह प्रथा और उपभोक्ता समूहका गठन, अधिकार आदि विभिन्न राज्यों में भिन्न-भिन्न है । कुछ बहुत स्थानों पर उपभोक्ता समूह कर्मचारी जमाकर्ता और मूनाफे के प्राप्तकर्ता के रुप में कार्यरत हैं न कि नियंत्रक भागीदार के रुप में । नेपाल और भारत यदि सूचनाओं प्रशिक्षणों आदि के क्षेत्र में सम्मिलित होकर आगे बढे तो सामुदायिक वानिकी (दोनों देशो में) के लिए यह लाभदायी सिद्ध हो सकता है । अतत: लिंङ्ग भेद, वर्ग भेद, जातिगत समानता, निर्णय में कौन सहभागी है, सामुदायिक वानिकी के भीतर व्यवस्थापन एवं मूनाफे में भागेदारी आदि के विषय में दोनों ही देश पूर्ण रुप से स्पष्ट नहीं हो पाए हैं।

भारत और नेपाल के बीच अनुभवों का आदान प्रदान ही "सामुदायिक वानिकी" और "संयुक्त वन व्यवस्थापन" को भविष्य में शक्तियुक्त बना सकेगा । इस दिशा में कुछ शूरआतें हुई हैं । सन् १९९२ के जुन में पहली बार नेपाल में एक कार्यशाला की आयोजना की गयी जिसमें विभिन्न उपभोक्ताओं, गैर सरकारी संस्थाओं के प्रतिनिधियों एवं अनूदान कर्ताओं नें भाग लिया । उसके बाद कई नेपाल के प्रतिनिधि भारत गए और भारत के हिमाङचल प्रदेश के प्रतिनिधि नेपाल आए । आशा है कि यह लेख बहुत से अनूसंधान कर्ताओं, गरै सरकारी कर्मचारियों एवं उपभोक्ता समूह को लाभान्वित करेगा ।

सन्दर्भ सामग्री

ब्राने. पी. तथा देव, ओ.पी., १९९३. "कोशी पहाडी क्षेत्रमा सामुदायिक वनका लागि सहभागितामूलक वन व्यवस्थापनको विकास" सामुदायिक वन बारे आयोजित राष्ट्रिय कार्यशाला गोष्ठीमा प्रस्तुत लेख, काठमाण्डौं, नेपाल।

क्याम्पबेल, जे.जी. तथा डेनहोल्म जे., १९९२, "सामुदायिक वन प्रणालीका लागि प्रोत्साहन । हिमाली भेकमा सामुदायिक वन प्रणाली विषयको प्रतिवेदन" इसिमोड, काठमाण्डौं।

कोलीयर, जे.भी., १९२८, "नेपालमा वन प्रणाली" । पर्सिवल ल्याण्डन लिखित *नेपाल* पुस्तकको अनुसूची १९, १९७६ मा रत्न पुस्तक भण्डार, काठमाण्डौंबाट पुन: प्रकाशित संस्करण।

श्री ५ को सरकार, १९८२, बिकेन्द्रीकरण ऐन, काठमाण्डौं, श्री ५ को सरकार।

फिसर, आर.जे., सिंह , एच.बी., पाण्डे, डि.आर., तथा लांग, एच., १९८९, ग्रामीण बिकासका लागि वन संसाधनको व्यवस्थापन - नेपालको सिन्धुपाल्चोक र काभ्रेपलान्चोक जिल्लाहरूको मामिला अध्ययन । एम.पी.ई. छलफल पत्र संख्या ८ । इसिमोड, काठमाण्डौं ।

ग्रोनाओ, जे. तथा श्रेष्ठ एन.के., १९९१ "अविश्वासबाट सहभागिता तर्फ: नेपालको सामुदायिक वन प्रणालीमा सहभागितामय वातावरणको सिर्जना," सामाजिक वन कार्य सम्बन्ध पत्र संख्या १२ ए । ओ.डि.ए.आई. लण्डन ।

श्री ५ को सरकार, नेपाल, १९८१, "छैठौं पञ्चबर्षीय योजना, १९८१ - १९८५, श्री ५ को सरकार" नेपाल, काठमाण्डौं ।

श्री ५ को सरकार, १९९२ ए. "आठौं पञ्चबर्षीय योजना, १९९२ - १९९७ "। श्री ५ को सरकार, नेपाल, काठमाण्डौं।

श्री ५ को सरकार, १९९२ बि. "कार्य संचालन निर्देशिका मस्यौदा" । सामुदायिक वन विकास महाशाखा, काठमाण्डौं, नेपाल ।

श्री ५ को सरकार, १९९३, "वन ऐन, २०५०" । अनौपचारीक अनुवाद । श्री ५ को सरकार, काठमाण्डौं, नेपाल ।

श्री ५ को सरकार, नेपाल ए.डि.बी, फिनिडा, १९८८ "वन क्षेत्रको गुरू योजना"। श्री ५ को सरकार, काठमाण्डौं, नेपाल ।

श्री ५ को सरकार, नेपाल ए.डि.बी फिनिडा, १९९१ए. "संशोधित वन क्षेत्रको लागि वन क्षेत्र नीति गुरू योजना" । वन तथा भू-संरक्षण मन्त्रालय, काठमाण्डौं ।

श्री ५ को सरकार, नेपाल ए.डि.बी फिनिडा, १९९१बि. "संशोधित कार्यकारी सारांश बन क्षेत्र गुरू योजना" । बन तथा भू संरक्षण मन्त्रालय, काठमाण्डौं।

भारत सरकार, १९२७ "भारतीय वन ऐनहरू", भारत सरकार, दिल्ली ।

भारत सरकार, "भारतीय वन संरक्षण ऐन १९८०" (१९८८ मा संशोधित), भारत सरकार, दिल्ली ।

जोशी, ए.एल., १९९३ । "परिवर्तित वन नीतिहरूको प्रशासनमा असरहरू" । सामुदायिक वन नीति र कानून कार्यशाला गोष्ठीमा प्रस्तुत कार्यपत्र । आर.इ.सी.ओ.एफ.टी.सी., बैंकक, थाइलैण्ड ।

कणेल, के. १९९३ । "सामुदायिक बन र २०५० वन ऐन: नीति र कार्यान्वयनमा प्रभाव" । सामुदायिक वन दोश्रो राष्ट्रिय कार्यशाला गोष्ठीमा प्रस्तुत कार्यपत्र , काठमाण्डौं, नेपाल।

कान्त, एस., सिंह, के. तथा सिंह, एन. १९९१ " समुदायमा आधारीत वन व्यवस्थापन प्रणाली (उडिसाका मामिला अध्ययनहरू)" इण्डियन इन्स्टीच्युट अफ फरेष्ट म्यानेजमेन्ट स्वेडिस इन्टरनेशनल डेभलपमेन्ट अथरिटी तथा आइ.एस.ओ. स्वेड फरेष्ट, नयां दिल्ली ।

नेपाल-अष्ट्रेलिया फरेष्ट्री प्रोजेक्ट (एन.ए.एफ.पी.), १९८२। "नेपालको राष्ट्रिय वन योजना, २०३३"। प्राविधिक नोट १।८२। अनौपचारिक अंग्रेजी अनुवाद । अष्ट्रेलियन नेशनल युनिभर्सिटी, क्यानवेरा ।

सरीन, एम., १९९४ "विवादबाट सहयोगतर्फ:" संयुक्त वन व्यवस्थापनमा स्थानीय संस्थाहरू, कार्यपत्र संख्या १४ । सोसाइटी फर द प्रमोशन अफ वेष्टल्याण्ड्स डेभलपमेन्ट, नयां दिल्ली ।

सेवा मन्दिर, १९९४, "वन संरक्षण समिति गठनका इकाईका रूपमा ग्रामीण राजश्व अध्ययन" । अप्रकाशित कार्यपत्र ।

सिंह, एस. १९९०, "वन व्यवस्थापनमा जनसहभागिता तथा गैर सरकारी संस्थाहरू एवं स्वयंसेवी संस्थाहरूको भूमिका" । दिगो विकासका लागि बन विषयको गोष्ठीमा प्रस्तुत कार्यपत्र । एशियाली विकास बैंक १९९० । नेशनल वेष्टल्याण्डस् डेभलपमेन्ट बोर्ड, वन तथा बातावरण मन्त्रालय, नयां दिल्ली । त्यस पछि "भारत सरकारको प्रयास: वन व्यवस्थापनमा जन-सहभागिता

शिर्षकमा सस्टेनेवल डेभलपमेन्ट बर्ष १ संख्या १ अक्टोवर १९९१ मा प्रकाशित ।

सिंह, के. तथा सिंह एन., १९९३, उडिसामा समुदायहरूबाट वन संरक्षण एक नयां हरीत क्रान्ति । फरेष्ट्स, ट्रिज एण्ड पिपुल, एफ.ए.ओ. न्युजलेटर संख्या १९ मा प्रकाशित ।

थम्पसन, एम तथा वारबर्टन, एम । १९८५, हिमाल जस्तो रूपको अनिश्चितता। माउन्टेन रिसर्च एण्ड डेभलपमेन्ट, ५ (२) पृष्ठ ११५(८५ ।

ICIMOD

ICIMOD is the first international centre in the field of mountain development. Founded out of widespread recognition of environmental degradation of mountain habitats and the increasing poverty of mountain communities, ICIMOD is concerned with the search for more effective development responses to promote the sustained well being of mountain people.

The Centre was established in 1983 and commenced professional activities in 1984. Though international in its concerns, ICIMOD focusses on the specific complex and practical problems of the Hindu Kush-Himalayan Region which covers all or part of eight Sovereign States.

ICIMOD serves as a multidisciplinary documentation centre on integrated mountain development; a focal point for the mobilisation, conduct, and coordination of applied and problem-solving research activities; a focal point for training on integrated mountain development, with special emphasis on the assessment of training needs and the development of relevant training materials based directly on field case studies; and a consultative centre providing expert services on mountain development and resource management.

MOUNTAIN NATURAL RESOURCES' DIVISION

Mountain Natural Resources constitutes one of the thematic research and development programmes at ICIMOD. The main goals of the programme include i) Participatory Management of Mountain Natural Resources; ii) Rehabilitation of Degraded Lands; iii) Regional Collaboration in Biodiversity Management; iv) Management of Pastures and Grasslands; v) Mountain Risks and Hazards; and vi) Mountain Hydrology, including Climate Change.

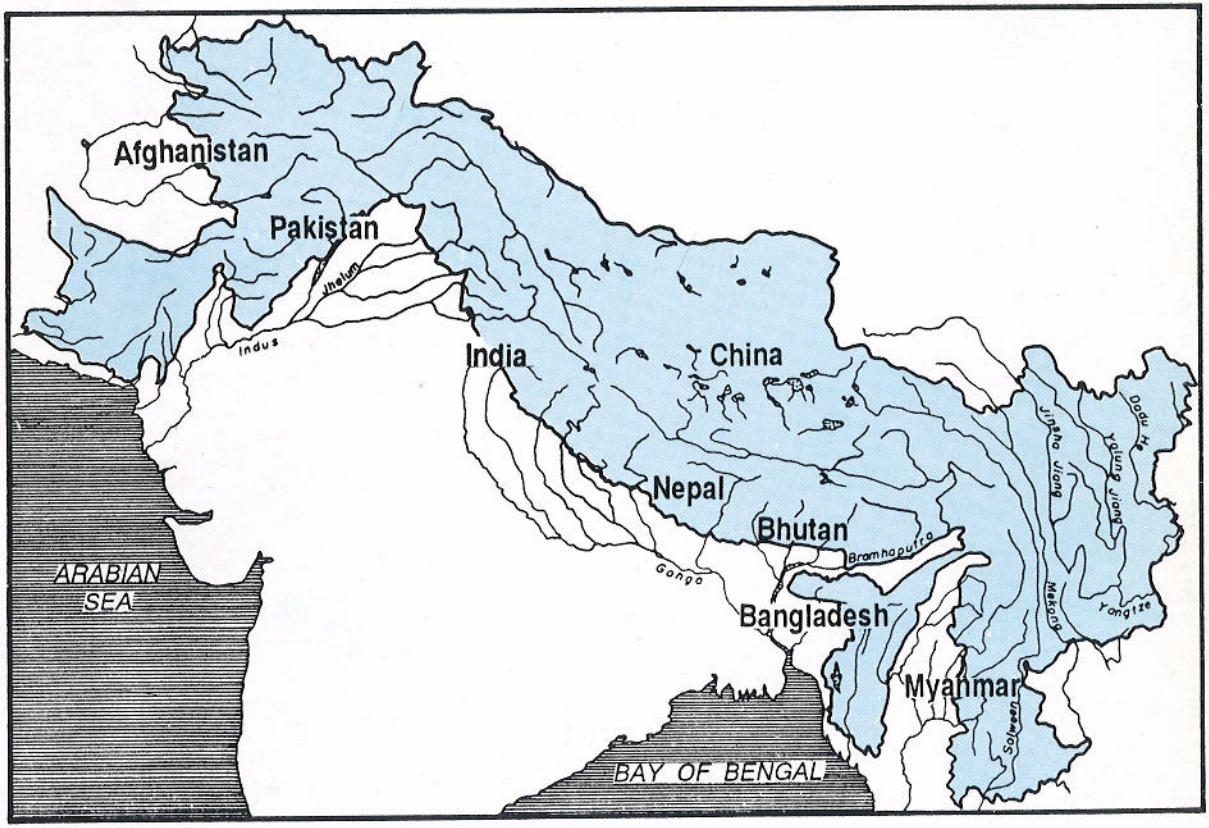

INTERNATIONAL CENTRE FOR INTEGRATED MOUNTAIN DEVELOPMENT
4/80 Jawalakhel, G.P.O Box 3226, Kathmandu, Nepal